डॉ. डी. बालसुब्रहमण्यम
वैज्ञा/इंजी-एसई
एस पी एल

एक अविस्मरणीय मुलाकात

हर साल, सुविख्यात प्रौद्योगिकीविद्, डॉ श्रीनिवासन, भूतपूर्व निदेशक, वीएसएससी को श्रद्धांजलि अर्पित करने हेतु, एयरोनॉटिकल सॉसाइटि ऑफ इंडिया, तिरुवनंतपुरम चैपटर के साथ मिलकर वीएसएससी द्वारा, एक स्मारक व्याख्यान का आयोजन किया जाता है। इस साल 12 दिसंबर, 2012 को डॉ श्रीनिवासन श्रोताकक्ष, वीएसएससी में तेरहवाँ डॉ श्रीनिवासन स्मारक व्याख्यान आयोजित किया गया।

इस महान द्रष्टा की याद में, डॉ. डी. बालसुब्रहमण्यम, वैज्ञा/इंजी-एसई, एस पी एल द्वारा लिखित लेख, पाठकों के लिए सहर्ष प्रस्तुत है:

एक ऐसी अविस्मरणीय मुलाकात, जिसके गुज़रे करीबन डेढ़ दशक हो चुके हैं परंतु ऐसा लगता है जैसे कल परसों की ही बात हो। बात उन दिनों की है, जब मैं ज़िंदगी के एक ऐसे कठिन दौर से गुज़र रहा था जब बावजूद मेरे अथक प्रयासों के मुझे कोई भी नौकरी नहीं मिल रही थी। कहने को भिलाई (तत्कालीन मध्यप्रदेश, अब छत्तीसगढ़) में अस्थायी तौर पर एक शिक्षक की नौकरी तो थी पर दिल में कुछ और ही कर गुजरने का सपना लगातार एक दस्तक देता रहता था। कुछ ऐसे ही अरमानों को दिल में लिए सन् 1997 में मैंने पहली बार तिरुवनंतपुरम की पावन भूमि में प्रवेश किया था। दरअसल मुझे विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र में कनिष्ठ अनुसंधान अध्येतावृत्ति (जूनियर रिसर्च फ़ेल्लोशिप) के चयन के लिए एक लिखित परीक्षा में सम्मिलित होने के लिए प्रवेश पत्र प्राप्त हुआ था। गरीबी के उस दौर में मैंने अपने मामूली बचत से तिरुवनंतपुरम आने-जाने का रेल टिकट निकाला और भौतिकी शास्त्र की कुछ किताबों से मनोरंजन करता हुआ भिलाई से लंबे रेल यात्रा पर चल पड़ा। एक छोटे से कामचलाऊ होटल में 70/- रुपया प्रतिदिन के हिसाब से मैंने दो दिनों के लिए अपना अस्थायी तंबू गाड़ दिया। उस शनिवार को जब पहली बार मैंने वी.एस.एस.सी प्रांगण में लिखित परीक्षा में हिस्सा लेने के लिए प्रवेश लिया तो नारियल पेड़ों से घिरे हुए इस सुंदर कार्यालय को देखा तो मेरी आँखें अनायास आशाओं से भर गयी। पुस्तकालय वाले प्रमुख कार्यालय के ऊपर भारत देश का सुंदर तिरंगा झंडा इस प्रांगण को और भी सुंदर बना रहा था। धीरे-धीरे शाम होते-होते अंतरिक्ष भौतिकी प्रयोगशाला द्वारा संपन्न उस परीक्षा में

आने वाली पीढ़ियों के लिए सार्थक विरासत का निर्माण हमें ही करना है।

मुझे उत्तीर्ण घोषित किया गया और रविवार को "साक्षात्कार" के लिए निमंत्रण मिल गया। अब एक बात तो तय था कि "साक्षात्कार" का चाहे जो भी परिणाम हो, मुझे आने-जाने का यात्रा भत्ता मिल जायेगा। और मैं ऐसे सुनहरे अवसर को गँवाना नहीं चाहता था, इसलिए उस रात मैंने अपना पूरा दमखम लगा दिया। नींद तो वैसे भी कोसों दूर थी, इसलिए सुबह जल्दी उठ कर पास के गणपति मंदिर (ईस्ट फोर्ट) में 6 बजे दर्शन कर पुनः वी.एस.एस.सी. प्रांगण पहुँच गया। आखिरकार मेरी मेहनत रंग लाई और मुझे अप्रैल 1998 से 2500य- प्रतिमाह की अनुसंधान अध्येतावृत्ति के लिए चुन लिया गया।

अप्रैल 1998 के प्रथम सप्ताह में समस्त प्रशासनिक औपचारिकताओं के उपरांत मुझे इसरो, वी.एस.एस.सी. का पहचान पत्र जारी कर दिया गया। उस नए पहचान पत्र को अपने छाती पर लगा देख मुझे अपने आप पर काफ़ी गर्व हुआ। मैं भगवान का बहुत शुक्रगुज़ार हूँ कि आज भी इस गौरवान्वित संगठन का मैं एक सदस्य हूँ। उस दिन सुबह क़रीब 05:30 बजे मैं पुनः गणपति मंदिर दर्शन हेतु पहुंचा। उन दिनों 24 नंबर की बस ईस्ट फोर्ट के पास से जाया करती थी इसलिए मैं अपना पहचान पत्र लगाकर गणपति भगवान के आरती में हिस्सा ले रहा था। आरती संपन्न होने के उपरांत एक अधेड़ उम्र के सीधे-साधे सज्जन मेरे पास आए और हल्के मुस्कान के साथ अभिनंदन किया। मैंने भी पूरे आदर के साथ उन्हें नमस्कार किया। मेरे पहचान पत्र को देखते हुए उन्होंने मुझसे अंग्रेज़ी में पूछा - "आप कहाँ काम करते हैं?" । मैंने बड़े गर्व से उत्तर दिया- "सर, मैं इसरो के विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र में काम करता हूँ" । उन्होंने मेरे बोलने के अंदाज़ पर ध्यान दिया और संवाद को आगे बढ़ाते हुए पुनः पूछा - " आप थोड़े नए लगते हो, आपका घर किधर है ?" मैंने जवाब दिया - "भिलाई, सर आपने भिलाई स्टील प्लांट का नाम सुना होगा" । उन्होंने आश्चर्य से मेरी तरफ देखा और पूछा - "आप भिलाई से इतनी दूर आयें हैं ?" मैंने भी दिलचस्पी लेते हुए बड़े गौर से अपना पहचान पत्र दिखाते हुए उनसे कहा - " सर, वी.एस.एस.सी. इसरो का एक सबसे बड़ा और गौरवशाली केंद्र है और मैं इसका सदस्य बनकर अपने आप को बहुत गौरवशाली समझता हूँ " । उस अजनबी सज्जन के चेहरे पर एक अदभुत चमक थी। उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और कहा - "आपसे मिलकर खुशी हुई, हमेशा अपनी तरफ से पूरी मेहनत लगाकर काम कीजिएगा। हर संगठन अपने सदस्यों के कारण गौरवान्वित होता है, आपके उज्जवल भविष्य के लिए मेरी शुभकामना आपके साथ है "। इतने वार्तालाप के बाद मुझे उस अजनबी का नाम और काम पूछने की तीव्र इच्छा हुई, परंतु वो थोड़े जल्दी में दिख रहे थे। थोड़ा साहस करते हुए मैंने उनसे पूछा - " सर, क्या आप रोज़ यहाँ आते हैं, और क्या मैं आपका नाम जान सकता हूँ ? " जल्दबाजी की वजह से वो मुस्कुराए और उन्होंने कहा -" आल द बेस्ट "। माथे पर चमकते हुए चंदन का टीका लगाए उस अजनबी पुरुष से वह मुलाकात बहुत जल्दी समाप्त हो गयी। मैं धीरे अपने आप को इस नए संगठन में ढालने लगा था। इतने बड़े संगठन में अलग-अलग कार्यालयों को जानने पहचानने में काफी समय लग जाता है। अभी कुछ ही दिन और हुए थे कि मुझे उस अजनबी से मुलाकात करने का पुनः सौभाग्य मिला परंतु इस बार उन्हें अपने वी.एस.एस.सी. प्रांगण में देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। मेरे दिल की धड़कने और भी बढ़ गयी जब मेरे मित्रों ने बताया कि वह सज्जन हमारे केंद्र के निदेशक डॉ. एस. श्रीनिवासन हैं। मुझे बिलकुल भी यकीन नहीं हुआ, पर यह सच है कि उतने बड़े वैज्ञानिक ने मुझसे दो पल बातें की थी।

1 सितंबर 1999 को उस महान वैज्ञानिक का निधन हो गया। उनके निधन के अगले दिन वी.एस.एस.सी. प्रांगण में एक विशाल शोकसभा का आयोजन हुआ था और मुझे ऐसे महान वैज्ञानिक के जीवनशैली के बारे में जानने का अवसर मिला। भगवान ने उनसे मिलने का मौका तो नहीं दिया पर जब भी उस मुलाकात के बारे में सोचता हूँ तो एक महान व्यक्तित्व मनसपटल पर दस्तक देता है, और अपने सादेपन की याद दिला जाता है। उन्होंने बिलकुल सच कहा था- "कोई भी संगठन अपने सदस्यों के कार्यकलापों और सादगी से महान बनता है"।

शरीर-रूपी मंदिर को आत्मा-रूपी दीपक ही प्रकाशित करता है।